ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBBIL04292
RNI REG. NO. UPBBIL/2014/66218 PP. NO.- 76-78
ISSN NO.-2347-2944
Vol.-10, No.-I, Issues-11 YEAR- June -2019

पर्यावरण संरक्षण की भारतीय परम्परा

राजीव कुमार श्रीवास्तव

असि0 प्रोफे0, समाजशास्त्र विभाग, श्री सुदिष्ट बाबा स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सुदिष्टपुरी–रानीगंज, बलिया (उ0प्र0),भारत

Received- 15.03.2019, Revised- 24.03.2019, Accepted - 30.03.2019 E-mail: rksharpur1974@gmail.com

सारांश : *पर्यावरण षब्द का वृहद अर्थ है परि (आस–पास या चारों ओर का) आवरण (परिवेष)। इस षब्द में प्रकृति के विभिन्न घटक जैसे – जल, वायु, मृदा, पेड़–पौधे, जीव–जन्तु मानव जाति एवं उनसे संबधित अन्य घटकों के परस्पर व्यवहार समाहित है एवं इस सम्पूर्ण तंत्र को ही पर्यावरण की संज्ञा देते हैं। पर्यावरण के बिना मानव का सतत विकास सम्भव नहीं है अतः इस बहुमूल्य पर्यावरण के संरक्षण में समाघ्एवं हमारे योगदान की इस लेख में विवेचना हैं।*

पिछले कुछ वर्षों से पर्यावरण संरक्षण की जोरों से चर्चा हो रही हैं। बड़े–2 आयोजन इस संदर्भ में हो रहे हैं। इसके बावजूद पर्यावरण का संकट बढ़ता ही जा रहा है। इसका प्रमुख कारण है, प्रकृति के प्रति हमारी सोच हमारे व्यवहार में एक बुनियादी विकृति है। यह व्यवहार हमारे संरक्षण की भारतीय परम्परा के बिल्कुल विपरीत है। भारतीयों की प्रकृति के साथ सह–अस्तित्व का संबंध बनाये रखने एवं संरक्षण प्रदान करने की वैभवषाली परम्परा रही हैं।

कुंजी शब्द – बहूमूल्य पर्यावरण, सम्पूर्णतन्त्र, घटक, संरक्षण, वैभवशाली, अकाट्श, विकृति।

'पर्यावरण संरक्षित तो जीवन सुरक्षित' यह उक्ति एक कहावत भर नही बल्कि अनिवार्य एवं अकाट्य सत्य है। पर्यावरण का संतुलन ही जीवनचक्र को नियमित व नियंत्रित करता है और इसमें गतिरोध आते ही जीवन संकट में पड़ जाता है। यही कारण हे कि इसकी सुरक्षा की चिंता प्राचीनकाल से होती आ रही है। वेदकालीन महर्षिगणों ने इसकी आवश्यकता एवं महत्ता को ध्यान में रखकर इसे शुद्ध एवं संरक्षित रखने हेतु नियम बना लिए थे।

प्राचीन संरक्षण की परम्परा–पर्यावरण एवं मानव के संबंधों की व्याख्या हमारे वेदों में की गई है, जिससे यह पता चलता है कि वेदों को सृष्टि विज्ञान का मुख्य ग्रंथ माना गया है । इन वेदों में सृष्टि के जीवनदायी तत्वों की विशेषताओं का सूक्ष्म व विस्तृत विवरण है। ऋग्वेद में अग्नि के रूप और उसके गुणों की व्याख्या की गई है। यजुर्वेद में वायु के गुणों, कार्यो और विभिन्न रूपों का विस्तृत वर्णन मिलता है। अथर्ववेद पृथ्वी तत्व का मुख्य वेद है। सामवेद का प्रमुख तत्व जल है। आकाशतत्व का वर्णन सभी वेदों में हुआ है। वैदिक महर्शियों ने इन प्राकृतिक शक्तियों को देवता स्वरूप माना और इसलिए प्रकृति के सभी रूपों की उपासना की जाती थी।

हर युग में मानव ने प्रकृति के साथ अटूट संबंध रखा और उसके संरक्षण का पूरा–पूरा ध्यान रखा, इसका उदाहरण हमें तुलसीदास रचित रामचरितमानस में मिलता है। रामचरितमानस के उत्तरकांड में वर्णन मिलता है कि चारगाह, तालाब, हरितभूमि, वन, उपवन में सभी जीव आनंदपूर्वक रहते थे, जैसा कि वर्णन किया गया है :

छन्द ' बामी तड़ाग अनूप कूप मनोहरायत सोहहीं।
सोपान सुन्दर नीर निर्मल देखि सुर मुनि मोहहीं।।
बहु रंग कंज अनेक खग कूजहिं मधुप गुंजारहीं।
आराम रम्य पिकादि खग रव जनु पथिक हंकारहीं।।

इस तरह रामायण काल में पर्यावरण एवं प्रकृति को मानव से घनिष्ठ मानते हुए विशेष संरक्षण प्रदान किया गया था। इसी प्रकार द्वापर युग में भी प्रकृति को उतना ही महत्व दिया गया जितना त्रेता युग में, इसका वर्णन हमें महाभारत में मिलता हैं। महाभारत में प्रत्येक तत्व को देवता सदृश स्वीकार कर उसकी अभ्यर्थना की जाती थी। उन दिनों वृक्षों की पूजा का प्रचलन था। वृक्षों को काटना महापाप समझा जाता था। इससे यह पता चलता है कि उस युग में भी मनुष्य प्रकृति के कितना करीब था और उसकी भावना प्रकृति से कितनी जुड़ी थी।

वैदिक एवं दार्शनिक साहित्य की भांति पुराणों में भी पर्यावरणीय चेतना सब ओर मुखर एवं प्रखर है। प्रायः सभी पुराणों में पर्यावरण के घटकों को पूजनीय माना जाता है। पहाड़ को देवात्मा हिमालय बताया है तो नदियो को देवी का पर्याय माना हे। जिसमें पूर्णतया गंगा का स्वरूप तो अवर्णनीय है। पुराणों की रचना का आधार भी सृष्टि के तत्वों को लेकर बना है। इतना ही नहीं अनेक पुराणों का नामकरण भी इन तत्वों के नाम को लेकर हुआ है जैसे अग्निपुराण, वायुपुराण आदि।

मानव एवं पृथ्वी के संबंध में ऋग्वेद के पृथ्वी सूक्त में अनेकों रूपों में आख्यायित किया गया है। यह धरती मां विश्वंभरी और हिरण्यवक्षा है। विश्वंभरा वसुधानी

अनुरूपी लेखक

ISSN NO.-2347-2944
Vol.-10, No.-I, Issues-11 YEAR- June -2019

प्रतिष्ठा हरिण्य वक्षा जगतो निवेशिनी (ऋग्वेद 12.1.6) यह प्रजन्यप्रिया है – वर्षा से वह जलमयी होकर अनेक प्रकार की वनस्पतियों को उत्पन्न करती है और जीवों को धारण करती है। 'ऐतरेय ब्राम्हण' (8–5) पृथ्वी को ऐश्वर्य और सौभाग्य दात्री कहा गया है। वस्तुतः पृथ्वी की मातृरूप और द्यौ के पितृ रूप की परिकल्पना और विवाह संबंध की आकांक्षा अनेक ग्रन्थों में वर्णित है। अर्थवेद (12.9) के 'भूमिसूक्त' में बार–बार भूमि माता से प्रार्थना की गई है कि वह अपनु जनों को सुरक्षा दे, दीर्घ आयुष्य दे, धन–धान्य दे, औशधि, जल तथा दूध दे अथवा यह भूमि विशाल हो, उदार हो। हमें यह प्राप्त होती रहे।

इन सभी के अलावा इतिहास के पन्नों में दबे तमाम तथ्यों को उभारने पर पता चलता है कि उन दिनों भी पर्यावरण के प्रति दृष्टिकोण विधेयात्मक था, और प्रकृति के संरक्षण पर भी पूरा–पूरा ध्यान दिया गया। सिंधु सभ्यता के युग में आर्यो की जीवनशैली ने पर्यावरण प्रेम को दर्शाया है। वे विशेष रूप से वृक्ष पूजा करते थे। आर्यो के द्वारा प्रारंभ की गई यह प्रक्रिया एवं परम्परा बाद में भी जीवित रही। कौटिल्य के अर्थशास्त्र में अभ्यारण्यों की पांच श्रेणियां होती थी। चंद्रगुप्त मौर्य के समय वन की सुरक्षा पर विशेष ध्यान दिया जाता था। सम्राट अशोक के शासनकाल में सर्वप्रथम वन्य जीवों के संरक्षण हेतु नियम बनाए गए थे। इसके पश्चात् भी यह सिलसिला चलता रहा।

प्रकृति मनुष्य की परम्परा ही नहीं, बल्कि संस्कृति भी है, जो कि हमारी रोजमर्रा के जीवन से जुड़ी रीति रिवाजों में शामिल हो गई है जैसे तुलसी पूजा, आम के वृक्ष की पूजा, आंवलों के वृक्ष की पूजा आदि ये सभी रीति–रिवाज न सिर्फ हमें मन और तन की ताजगी देते है बल्कि प्रकृति संरक्षण में मदद करते है।

अकेले भारत ही नहीं, अमेरिकी महाद्वीप, पूर्वी अफ्रीका के द्वीप, आस्ट्रेलिया फिलीपींस, बेबीमिश्र आदि की अनेक प्राचीन सभ्यताओं में प्रकृति के प्रति गहरी श्रद्धा–भावनाओं के अनेक उदाहरण मिलते है। किंतु जैसे–जैसे मनुष्य प्रकृति के अनुदानों से लाभान्वित होता गया उसके लोभ में भी बढ़ोत्तरी होती गयी। लोभ की वृत्ति ने श्रृद्धा के भाव को कम कर दिया।

वर्तमान स्थिति :पर्यावरण की इस सुदीर्घ एवं अति प्राचीन परम्परा को आधुनिकता की आग ने भारी नुकसान पहुंचाया है। दोहन और शोषण, वैभव एवं विलास की रीति नीति औद्योगीकरण ने पर्यावरण को संकट में डाल दिया है। फलतः जीवन भी संकटग्रस्त है। सब ओर विपन्नता है। प्राकृतिक आपदाओं का कूर तांडव है। इन दिनों मनुष्य द्वारा वनस्पति जगत के साथ जो व्यवहार किया जा रहा है उपेक्षा मात्र न रहकर अनौचित्य और अत्याचार की सीमा में जा पहुंचा है। वनों की कटाई के कारण वन क्षेत्र निरंतर घटते जा रहे हैं। विशेषज्ञों का कहना है कि पर्यावरण संतुलन एवं जीवन रूपी रथ चक्र को इसी ढंग से गतिमान रखने के लिए समूचे भूभाग में 33 प्रतिशत क्षेत्र में वृक्ष वनस्पतियों का होना अनिवार्य है।

परंतु आज स्थिति अत्यंत विस्फोटक हो गई है। अब मात्र दस प्रतिशत भूमि ही सघन वनों से आच्छादित रह गई है। अपने देश में कुछ दशकों पूर्व तक सत्तर प्रतिशत भूभाग वनों से आच्छादित था। सन् 1854 तक कटते–कटते चालीस प्रतिशत रह गया। सन् 1952 में यह घटकर बाईस प्रतिशत तक पहुंच गया और आज मात्र 19.5 फीसदी भूभाग में ही जंगल बचे हैं। अनिवार्य पर्यावरण संतुलन सीमा से यह तेरह प्रतिशत कम है। इस संदर्भ में सन् 1989–91 की अवधि में सैटेलाइट की सहायता से किये गये अध्ययन से यह तथ्य उजागर हुआ है कि देश में अब कुल छः लाख चालीस हजार एक सौ सात वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में ही वन रह गये हैं। जो देश के कुल भूभाग का मात्र 19.5 प्रतिशत है। मनुष्य ने थोड़े बहुत जो वृक्षारोपण किये भी है, उनसे अभी तक मात्र 1.1 प्रतिशत भूभाग को ही ढका जा सका है।

वैज्ञानिकों का कहना है कि यदि पृथ्वी को प्रतिवर्ष वृक्षारोपण द्वारा हरा–भरा बनाया जाए तभी देश के पर्यावरण को संतुलित बनाया जा सकता है। इससे भूमि का क्षरण व कटाव रूकेगा, साथ ही औसत वर्षा में भी वृद्धि होगी। पर्यावरण एवं वातावरण का संतुलन न केवल मानवी अस्तित्व के लिए वरन प्राणिमात्र की जीवन रक्षा के लिए भी नितान्त आवश्यक है। जैसा कि सर्वविदित है, मनुष्य पर्यावरर्णीय आवरण से घिरा है, उसमें रहता ही नहीं, उसे प्रभावित करता और प्रभावित होता है। पर्यावरण उसे निर्मित करता हैं एवं वह भी पर्यावरण को निर्मित या विकृत करता है।

प्रायः हमकों इसका अहसास नहीं रहता। किन्तु जब कभी कहीं सूखा, अकाल, भूकंप, अति–वृष्टि, तूफान, भूमि–स्खलन अथवा प्रदूषण जन्य कोई भारी त्रासदी सामने आती है तो हम सहसा चौंक उठते हैं और कहने लगते हैं कि पर्यावरण में कोई भंयकर संकट उपस्थित हुआ है। पहले कभी ऐसा होता था तो उसे दैव इच्छा कहकर संतोष कर लेते थे। आज भी हम जान–माल के नुकसान को तो ऑकने की कोशिश कर लेते हैं, किन्तु भूल जाते हैं कि पर्यावरण में असंतुलन आता हैं या विकृतियॉ आती हैं तो मानव के मन और व्यवहार पर कितना दबाव पड़ता है एवं वनों के दुरपयोग से जो संकट आते हैं, उनकी तो वह सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक समायोजन से क्षतिपूर्ति कर लेता है पर मनुष्य के द्वारा किये प्रदूषण और

ISSN NO.-2347-2944
Vol.-10, No.-I, Issues-11 YEAR- June -2019

पर्यावरण–विकृति को प्रभाव शून्य करना सरल कार्य नहीं। पर्यावरण संरक्षण के प्रयास : धीरे–धीरे मनुष्य को अपनी गलतियों का एहसास होने लगा हैं उसे समझ में आ गया है कि यदि प्रकृति है तो वह है और अगर प्रकृति नहीं रहेगी तो उसका अस्तित्व भी समाप्त हो जायेगा। इसलिए मनुष्य अब अपनी तरफ से हर संभव प्रयास कर रहा है कि वह अपनी संरक्षण की भारतीय परम्परा को निभा सके। सरकार द्वारा भी कई कड़े कानून बनाये जा रहे है, अनेक योजनाएं बनाई जा रही है, जिससे पर्यावरण को संरक्षित किया जा सके। भारत सरकार द्वारा सन् 1972, 1983, 1986 और 1991 में 'वन्य जीव संरक्षण' कानून बनाया गया। प्रकृति के अन्य घटकों जैसे वायु, जल, मृदा इत्यादि के संरक्षण हेतु जल प्रदूषण नियंत्रण, वायु प्रदूषण एवं पर्यावरण अधिनियम जिसके अंतर्गत विभिन्न अवयवों को शामिल किया गया है, के संरक्षण हेतु अधिनियमों को बनाया गया है एवं इन नियमों को लागू कर पर्यावरण के संरक्षण मे सरकारी तंत्र प्रयासरत है। इसके अलावा सरकार द्वारा अनेकों कानून पास किए गए जिनका पालन भी किया जा रहा है। अगर इन नियमों का कड़ाई से पालन किया जाय तो इनके अंतर्गत, अपराधियों को दंड का प्रावधान भी है। किन्तु भारतीय दण्ड संहिता एवं सहकारी तंत्र की मौजूदा व्यवस्था के कारण बहुत कम लोलो को दण्ड मिल पाता है।

आगे उठाये जा सकने वाले कदम :सिर्फ सरकार द्वारा प्रयास करने से कुछ विशेष नहीं होगा, जब तक कि आम आदमी अपनी तरफ से कोई प्रयास न करें तब तक पर्यावरण का संरक्षण असंभव है। जरूरत है कि हर आम आदमी अपनी जिम्मेदारियों को समझे। वह समझे कि पर्यावरण को संरक्षित करने के लिए वह कौन सा छोटे से छोटा उपाय अपनी तरफ से कर सकता है। हर पुरूष, स्त्री और बच्चों को अपनी–अपनी तरफ से प्रयत्न करने होंगे। एक दूसरे को पर्यावरण संरक्षण का महत्व समझ कर इसे जन आंदोलन का रूप लेने के लिए जनभागीदारी नितांत आवश्यक है।

आज का युग वैज्ञानिक युग माना जाता है हर तरफ नई–नई खोजे और अविष्कार हो रहे हैं, इन खोजों/अविष्कारों का सही मायने में पर्यावरण के संरक्षण में उपयोग करना चाहिए ताकि पर्यावरण को संरक्षित किया जा सके। इन आंदोलनों में टी.वी., रेडियों, समाचार पत्रों का बखूबी इस्तेमाल किया जा सकता है। विज्ञापनों द्वारा जन साधारण को जागृत किया जा सकता है व उनसे अपील की जा सकती है कि वे अपना सहयोग देकर हमारी पारम्परिक धरोहर को जीवित रखें। छात्र–छात्रों का इसमें सहयोग लिया जा सकता है उन्हें पर्यावरण के महत्व व हानियों से अवगत किया जा सकता है। इस तरह हम जन जन तक यह बात फैला सकते है। कि पर्यावरण संरक्षण मानव जीवन के लिए कितना महत्वपूर्ण है। वृक्षारोपण, प्राकृतिक वनसंरक्षण, जैसे कार्यो को प्रोत्साहन देकर वर्तमान पीढ़ी को पर्यावरण संरक्षण के प्रति जागरूक करके हम अपनी धरोहर को बचा सकते है।

उपसंहार– हमें यह ज्ञात है कि पर्यावरण संरक्षण हमारी प्राचीन परम्परा रही है परन्तु आधुनिकता की आग ने इसे भारी नुकसान पहुंचाया है। जैसा कि महात्मा गॉधी ने कहा था – ''प्रकृति हम सभी की आवश्यकता तो पूरी कर सकती हैं, किन्तु किसी एक के लालच को भी पूरा नहीं कर सकती हैं''। दोहन, शोषण और वैभव विलास की रीति नीति ने पर्यावरण को संकट में डाल दिया हैं, फलतः जीवन भी संकटग्रस्त है, सब ओर विपन्नता है, प्राकृतिक आपदाओं का क्रूर तांडव है। समाधान की खोज के इन पलों में सार्थक निदान के लिए जरूरी है कि हम अपनी विरासत को संभाले। पर्यावरण संरक्षण की टूटी–बिखरी कड़ियों को पुनः जोड़े। हममें से प्रत्येक के लिए यह आवश्यक है कि मन, कर्म, वाणी से इस सत्य को स्वीकार करें एवं पर्यावरण के संरक्षण में अपना योगदान दें।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1– श्रीवास्तव–डॉ0 राजीव कुमार– वैश्वीकरण एवं समाज – वैभवलक्ष्मी प्रकाशन –वाराणसी।
2– श्रीवास्तव– डॉ0 राजीवकुमार – वैश्वीकरण एवं भारत–विजय प्रकाशन – वाराणसी।
3– श्रीवास्तव– डॉ0 राजीव कुमार वैश्वीकरण एवं विविध आयाम––इन्द्रदीप प्रकाशन– दिल्ली।
4– श्रीवास्तव–डॉ0 राजीव कुमार–प्राचीन भारतीय धर्म एवं समाज वैभव लक्ष्मी प्रकाशन–वाराणसी।
5– श्रीवास्तव – डॉ0 राजीव कुमार –पर्यावरण– –वैभव लक्ष्मी प्रकाशन–वाराणसी।

*****